B.A. IInd Yr. Hon.

अथ बहुव्रीहि समास प्रकरण।

सूत्र संख्या 964 – शेषो बहुव्रीहि (2।2।23।

यह अधिकार सूत्र है। इसका क्षेत्र 'चार्थे द्वन्द्वः' से पूर्व तक है। सूत्र में 'शेष' पद, पहले जिन समासों की चर्चा हो चुकी है, उनसे बचे हुए समास का बोध कराता है। पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में इससे पूर्व तत्पुरुष समास के कई सूत्रों 'द्वितीया श्रिता०' आदि तथा कई विभक्तियों 'सप्तमी शौण्डैः', 'पंचमी भयेन' 'प्रथमा से अन्त होनेवाले आदि की चर्चा की गई है। इनमें प्रथमा से अन्त होनेवाले पदों के समास पर व्याख्या नहीं हुई है, अतः यहाँ 'शेष' पद प्रथमा से अन्त होने वाले बहुव्रीहि समास का बोध कराता है।

सू०सं 965 अनेकमन्यपदार्थे (2।2।24' – यह विधि सूत्र है। 'प्राक् कडारात्समासः', 'सह सुपा' तथा 'शेषो बहुव्रीहि', की इसमें अनुवृत्ति हो जाती है। सूत्र में स्थित 'अन्य' पद 'दो या अधिक पदों के ~~सम~~ सामान्य अर्थ से इतर अर्थ' को बोधित करता है। ~~अर्थात्~~ बहुव्रीहि समास में सभी पद प्रथमान्त समानाधिकरण होते हैं तथा अन्य पद का बोध कराते हैं।

यथा – नीलकण्ठः – नीलः कण्ठः यस्य सः – नीला है कण्ठ जिनका, यहाँ नीलः और कण्ठः ये दो पद अपने अर्थ को न बताकर अन्य पद अर्थात 'शंकर' इस अर्थ का बोध कराते हैं। और इसी कारण ~~नीलकण्ठ~~ 'नीलकण्ठः' बहुव्रीहि समास संज्ञक है।

966 सप्तमी विशेषणे बहुव्रीहौ – 2।2।35। यह विधि सूत्र है। बहुव्रीहि समास में सप्तमी से अन्त होनेवाले पदों का ~~पूर्वनियम~~ पूर्वनिपात नियम से ही होता है। एवं भिन्न ~~भिन्न~~ विभक्ति वाले पदों का भी बहुव्रीहि समास होता है। अर्थात् बहुव्रीहि समास में सप्तम्यन्त के पूर्वप्रयोग का विधान व्यर्थ होकर यह स्पष्ट करता है कि व्यधिकरण पदों का भी बहुव्रीहि समास होता है।

यथा – कण्ठेकालः – कण्ठे कालो यस्य (कण्ठ में स्थित है काल जिसके अर्थात् शंकर या भगवान् व्यक्ति)

Scanned with CamScanner

इस विग्रह में प्रस्तुत सूत्र से बहुव्रीहि समास होने पर सप्तम्यन्त 'कण्ठे' का पूर्व प्रयोग होने पर — 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा, 'प्रथमा निर्दिष्टं समास उपसर्जनं' से उपसर्जन संज्ञा एवं 'उपसर्जनं पूर्वम्' से उसका पूर्वनिपात हुआ।

(b) पीताम्बरः — पीतं अम्बरं यस्य सः — इस विग्रह में 'अनेकमन्यपदार्थे' से बहुव्रीहि समास होने पर - 'कृत्त॰', 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' से विभक्ति लोप होकर

पीत का पूर्व प्रयोग होकर, 'सप्तमी विशेषणे...' से होने पर प्रातिपदिक आदि कार्य होने पर 'पीताम्बरः' रूप सिद्ध होता है।

967 हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम् — 6|3|9
यह विधिसूत्र है। यहाँ 'अलुगुत्तरपदे' 6|3|1 की अनुवृत्ति होती है। सूत्र का अर्थ है संज्ञा अर्थ में हलन्त तथा अकारान्त शब्दों के बाद में रहने पर सप्तमी विभक्ति का लोप (अलुक्) नहीं होता है। यथा — 'कण्ठेकालः'

लौ॰ विग्रह
(5) सरसिजम् — सरसि जायते इति (कमल) —

अलौकिक विग्रह — सरस् + ङि + जन् + ड।
'अनेकमन्यपदार्थे' सूत्रानुसार सप्तम्यन्त सरसि शब्द का जन शब्द (पद) के साथ समास हुआ। कृत्त॰ से प्रातिपदिक संज्ञा, प्रथमा॰ उपसर्जन संज्ञा, ~~सुबन्त~~ 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' सूत्र से सप्तमी विभक्ति के 'ङि' का लोप न होकर 'सरसिजम्' रूप सिद्ध होता है।

(c) प्राप्तोदको ग्रामः — लौ॰ वि॰ — प्राप्तम् उदकं यम् (जिसे जल प्राप्त हो गया हो) — ग्रामः का विशेषण होने के कारण 'प्राप्तोदकः' का प्रयोग हुआ।
(द्वितीयार्थ में प्रयुक्त है प्राप्तोदकः)
Same as सरसिजम्

(d) तृतीयार्थ में — ऊढरथोऽनड्वान — ऊढो रथो येन (जिस बैल ने रथ खींचा हो) Same as सरसिजम्

(e) चतुर्थ्यर्थ में — उपहृतपशुरुद्रः — उपहृतः पशुः यस्मै (जिस रुद्र को पशु दिया गया हो)

(f) पञ्चम्यर्थ में — उद्धृतौदना स्थाली — उद्धृत ओदनो यस्या (जिस थाली में भात निकाला गया हो।)
Same as सरसिजम्

९७० बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच् - ५/४/११३

यह विधिसूत्र है। यह 'समासान्ताः' के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। यदि बहुव्रीहि समास के अन्त में अपना अंगवाची सक्थि (जाँघ), अक्षि (आँख) पद हो तो उससे 'षच्' (अ) प्रत्यय होता है। 'ष्' की इत् संज्ञा होने से 'षिद्गौरादिभ्यश्च' से 'ङीष्' प्रत्यय होता है।

यथा - दीर्घसक्थः 'दीर्घे सक्थिनी यस्य' (जिसकी जंघाएँ बड़ी हों) - दीर्घसक्थि - प्रकृत सूत्र से 'षच्' प्रत्यय होनेपर 'इकार' का लोप तथा सु विभक्ति लगाकर 'दीर्घसक्थः' रूप सिद्ध हुआ।

(b) जलजाक्षी - जलजे इव अक्षिणी यस्याः (जिसकी आँखें कमल के समान हो।) Same as दीर्घसक्थः अन्त में स्त्री प्रत्यय लगाकर 'जलजाक्षी' रूप सिद्ध हुआ।

जहाँ पर अंगवाची शब्द नहीं होते हैं वहाँ 'षच्' प्रत्यय नहीं होता है। यथा - 'स्थूलाक्षः ~~वेणु~~ वेणुयष्टिः।'